INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL
ISSN NO : 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 11 | ISSUE - 11 | DECEMBER - 2021

प्राचीन भारत में ग्राम और नगर में संबंध : एक ऐतिहासिक अध्ययन

डॉ. विजय कुमार
असि0 प्रोफेसर – प्राचीन इतिहास विभाग,
इन्द्रासन सिंह स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी राजकीय महाविद्यालय, पचवस, बस्ती।

शोध सारांश –

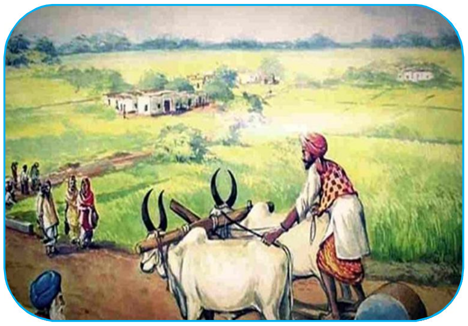

प्राचीनकाल से ही भारतीय सभ्यता के विकास में ग्राम का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। प्राचीन काल से ही भारतीय समाज का अधिकांश भाग ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता था। इस कारण ग्राम केवल निवास की इकाई नहीं था, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और प्रशासनिक जीवन का केंद्र भी था। प्राचीन भारतीय प्रशासनिक व्यवस्था में ग्राम को प्रशासन की सबसे छोटी और मूल इकाई माना गया। प्रारंभिक ऋग्वैदिक काल में गाँव (ग्राम) सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन के केंद्र थे। प्रत्येक ग्राम का नेतृत्व 'ग्रामणी' करता था, जो प्रशासन और सुरक्षा का दायित्व निभाता था। उत्तर वैदिक काल में ग्रामीण व्यवस्था अधिक संगठित और जटिल हो गई। उत्तर वैदिक काल में कृषि का विस्तार हुआ और निजी भूमि स्वामित्व की भावना विकसित होने लगी। महाजनपदों का उदय हुआ, जिनमें मगध, कोसल और वज्जि प्रमुख थे। गाँव (ग्राम) आर्थिक जीवन की आधारभूत इकाई बने रहे, जहाँ कृषि मुख्य व्यवसाय था। हल और लोहे के औजारों के प्रयोग से कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई। इस काल में भूमि पर निजी स्वामित्व की भावना और अधिक स्पष्ट हुई तथा किसानों से कर (भोग, बलि आदि) वसूला जाने लगा, जिससे राज्य की आय सुनिश्चित होती थी। मौर्य काल में ग्रामीण व्यवस्था अत्यंत सुव्यवस्थित, संगठित और राज्य नियंत्रण के अंतर्गत थी। प्रत्येक ग्राम का संचालन 'ग्रामिक' द्वारा किया जाता था, जो स्थानीय व्यवस्था और कर संग्रहण के लिए उत्तरदायी होता था। किसानों, श्रमिकों और शिल्पकारों की भूमिकाएँ स्पष्ट थीं और राज्य उनके कार्यों की निगरानी करता था। इस प्रकार, मौर्य काल में ग्रामीण व्यवस्था न केवल आर्थिक रूप से सशक्त थी, बल्कि प्रशासनिक रूप से भी अत्यंत संगठित और प्रभावी थी।

शुंग, कण्व और सातवाहन जैसे क्षेत्रीय राज्यों का उदय हुआ, जिनमें सातवाहन साम्राज्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है। भूमि दान की परंपरा का विकास हुआ, इससे ग्रामों की संरचना में परिवर्तन आया और भूमिधरों तथा कृषकों के बीच नए संबंध स्थापित हुए। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि के साथ–साथ शिल्प और व्यापार भी महत्वपूर्ण हो गए। भूमि दान की परंपरा और अधिक व्यापक हो गई, जिससे सामंतवादी प्रवृत्तियों का उदय हुआ। सामंतवाद का नगरों से घनिष्ठ किंतु जटिल संबंध था। सामंतों का मुख्य आधार ग्रामीण क्षेत्र थे, क्योंकि वहीं से उन्हें कर, उपज और श्रम प्राप्त होता था। आर्थिक गतिविधियाँ ग्रामों तक सीमित होने लगीं और नगरों की स्वतंत्र आर्थिक भूमिका धीरे–धीरे कमजोर पड़ने लगी। ग्राम मुख्यतः कृषि और पशुपालन पर आधारित अर्थव्यवस्था के केंद्र थे। ग्रामों के उत्पाद नगरों तक पहुँचाए जाते थे इसके विपरीत, नगर व्यापार, शिल्प और प्रशासन के केंद्र थे,। नगरों में निर्मित वस्तुओं से ग्रामीण जीवन की आवश्यकताएँ पूरी होती थीं।

मुख्य शब्द – ग्राम प्रशासन, ग्राम सभा, ग्रामणी, प्राचीन भारत, स्थानीय शासन, मौर्यकाल, गुप्तकाल

ऋग्वेद में ग्राम की संरचना सरल और सामूहिक थी। ग्राम में रहने वाले लोग मुख्यतः कृषि और पशुपालन पर निर्भर थे, हालांकि प्रारंभिक चरण में पशुपालन को अधिक महत्व प्राप्त था। गौ–सम्पत्ति को समृद्धि का प्रतीक माना जाता था और "ग्राम" शब्द का प्रयोग कई बार धन के अर्थ में भी किया गया है। राजनीतिक दृ ष्टि से ग्राम का नेतृत्व 'ग्रामणी' करता था, जो ग्राम का प्रधान और शासक प्रतिनिधि होता था। ग्रामणी का कार्य केवल प्रशासन तक सीमित नहीं था, बल्कि वह युद्ध के समय अपने ग्राम के लोगों का नेतृत्व भी करता था। सामाजिक रूप से ग्राम एक संगठित और सहयोगात्मक इकाई था। ऋग्वेदिक काल में परिवारों के मुखिया कुलपा तथा ग्राम के लड़ाकू दलों के प्रधान ग्रामणी कहलाते थे। ब्राजपति इन दोनों को युद्ध में अपने साथ ले जाता था। खानाबदोश सामाजिक जीवन में ग्रामणी सिर्फ लड़ाकू टोली का मुखिया था परन्तु जब ऋग्वेदिक जीवन स्थिरवासी हो गया तब ग्रामणी सम्पूर्ण ग्राम का न केवल मुखिया हो गया वरन् कालान्तर मेही व्राजपति बन गया। जातकों के समय स्थानीय प्रशासन की सबसे छोटी महत्वपूर्ण ईकाई, ग्राम का प्रमुख ग्राम–भोजक या ग्रामिणी कहलाता था। यह ग्राम में शान्ति सुव्यवस्था व सार्वजनिक निर्माण आदि की व्यवस्था के अतिरिक्त न्याय व्यवस्था का कार्य भी करता था। ग्राम–भोजक की सूचना का राज दरबार में बहुत महत्व था. इसकी शिकायत पर राजा ग्रामीणों को बिना सुने ही दण्ड तक दे देते थे। जुर्माने (दण्डबलि) की वसूली की धनराशि ग्राम–भोजक ही वसूलते थे। दुष्ट ग्राम–भोजक को राजा स्वयं दण्डित करता था।

जातकों में संगठित संवैधानिक ग्राम–परिषद का कोई उल्लेख नहीं है। परन्तु रतिलाल मेहता महोदय के अनुसार प्राचीन भारत में ग्राम–परिषद थी जिसमें तीस सदस्य होते थे तथा इनमें नारियां भी उपस्थित थीं। ग्राम के सार्वजनिक सभा–भवन को सन्थागार कहते थे। ग्राम की ग्रामीण संस्थायें स्थानीय न्याय तथा सभी अपराधों को नियन्त्रित करने के लिए उत्तरदायी थी। यद्यपि राजा का भाग द्रोणमापक के निरीक्षण में एकत्रित किया जाता था परन्तु ग्राम पंचायतें कर निर्धारण व एकत्रित करने का कार्य करती थीं तथा वे इच्छानुसार ग्राम को कर मुक्त भी कर देती थीं। ग्राम भोजक सहायक अधिकारियों की सहायता से सभी करों को वसूल करता था। अन्य सहायक अधिकारियों बलिसाधक (जातक पंचम, पृष्ठ–106), बलि–पत्तिगाहक (जातक द्वितीय, पृष्ठ–17). निग्गाहक (जातक चतुर्थ, पृष्ठ–235), तुण्डिय (जातक पंचम, पृष्ठ 102–06) और अकासिय (जातक षष्ठ, पृष्ठ–212) थे। महाकाव्य काल में ग्राम का प्रमुख ग्रामणी था तथा इसके ऊपर क्रमशः दशग्रामी विशतीप और शतग्रामी या ग्रामशताध्यक्ष थे जो क्रमशः 10.20 और 100 ग्रामों के अधिकारी थे. इसके अतिरिक्त अधिपति 1.000 ग्रामों का अधिकारी होता था। मौर्य प्रशासन की सबसे छोटी ईकाई ग्राम थी।

कौटिल्य ने ग्राम–नियोजन (विभिन्न कार्यों हेतु भिन्न–भिन्न स्थानों का निर्धारण) के स्वरूप, ग्राम विकास हेतु किये जाने वाले कार्यों तथा ग्राम से प्राप्त होने वाले भूराजस्व के स्रोतों का विवरण दिया है। ग्रामों में मिन्न–मिन्न करों को वसूल करने हेतु निम्न श्रेणी के कई निरीक्षक नियुक्त होते थे। अर्थशास्त्र में उल्लेखित ग्राम–वृद्धपरिषद (ग्राम के प्रमुख वृद्ध लोगों की सभा) प्रशासन में ग्रामणी की सहायता करती थी। कर के रूप में वसूल अन्नों को संचित करने के लिए कोष्ठागारों का निर्माण किया गया था। इज (गोचरभूमि), सार्वजनिक उघान, आम्रवाटिकाओं, कूपों (कुंए), उद्यान और धर्मशालाए (निषदया) ब्रजभूमिक नामक अधिकारी के अधीन थी। स्थानीय व द्रोणमुख क्षेत्रीय स्तर के तथा खार्वाटिक व संग्रहण जिला स्तरसोहगौरा (गोरखपुर) तथा महास्थान (बांग्लादेश के बोगरा जिले में स्थित) लेख, ये दोनों लेख चन्द्रगुप्त मौर्य के समय के ग्राम प्रशासन की जानकारी के महत्वपूर्ण स्रोत है। गोप नामक अधिकारी पाँच या दस मों का प्रशासन देखता था तथा यह समाहर्ता के अधीन कार्य करता था। यह चोरी के मामलों निपटारा करता था। ग्राम का प्रमुख अधिकारी ग्रामणी कहलाता था जो स्त्रियों व असहायों का रक्षक होने के साथ–साथ हिंसा करने वालों पर 24 पण तक जुर्माना लगा सकता था।

प्रशासन की सबसे छोटी ईकाई, ग्राम, प्रशासनिक दृष्टि से विभिन्न कोटियों में बँटी (1) परिहारक–कुरमुक्त गाँव (2) आयुधीय–सैनिक देने वाले गाँव (3) ऐसे गाँव जो कर देते हे और (4) वे गाँव जो विष्टी (बेगार), दही, दूध आदि से कर चुकाते थे। भूमि की गुणवत्ता के आधार पर इन गाँवों को उपगावों सर्वश्रेष्ठ मध्यम व निम्न में बाँटा गया था। ग्राम के सैनिक व आर्थिक प्रशासन के लिए सरकारी श्पुरुषश नियुक्त थे परन्तु उनका प्रमुख ग्रामिक (ग्रामणी) ही था, ग्रामिक व ग्रामवृद्धा की सभा ग्राम की समस्यायों व विवादों का निपटारा करती बी परन्तु यदि दो गावों के बीच कोई समस्या होती थी तो पाँच या दस गावों के ग्रामवृद्ध मिलकर उसका समाधान करते थे। जब ग्रामणी सम्पूर्ण ग्राम के हित में कहीं जाता था तो ग्राम के लोग क्रमशः

अपनी पारी के अनुसार उसके साथ जाते थे। कृषकों को राज्य की ओर से स्वास्थ्यवृद्धि और बीमार कृषकों को रोग निवारण हेतु धन दिया जाता था तथा अनुकूल समय में धन लौटा देने वालों पर राजा पिता की भाँति अनुग्रह करता था। ग्राम भूमि के सन्दर्भ में मेगास्थनीज ने लिखा है कि सभी भूमि राजा की ही होती थी।

ग्रामों का प्रमुख प्रशासनिक अधिकारी ग्रामिक कहलाता था। जिसका प्रमुख कार्य सभवतः राजस्व वसूली कर केन्द्रीय कोष में जमा करना था। पद्धपाल नामक पदाधिकारी स्थानीय मुखिया होता था। दानपति दान को प्राप्त कर उसे सुरक्षित रखने का कार्य करता था। सम्भवतः यह दान शासकों को उपहारादि रूप में प्राप्त होता था जैसा वैदिक काल में बलि अर्थात राजाओं को स्वेच्छा से दी गयी भेंट तथा मौर्यकाल में औपायनिक अर्थात विशेष अवसरों पर राजा को दी गई भेंट। परमेश्वरी लाल गुप्त महोदय के अनुसार हविष्क के मथुरा अभिलेख में प्राचीनीकन शब्द आया है जिसे खरासलेरपति (किसी स्थान विशेष का शासक) तथा इकनपति (मन्दिर का प्रबन्ध अधिकारी) कहा गया है। आर्थिक दृष्टि से ग्राम व्यवस्था का मुख्य आधार कृषि था, परंतु इसके साथ–साथ पशुपालन, शिल्प और व्यापार भी महत्वपूर्ण थे। विनिमय प्रणाली से शुरू होकर धीरे–धीरे मुद्रा का प्रचलन बढ़ा। ग्रामों और नगरों के बीच आर्थिक संबंध स्थापित हुए।

नगर–गुप्तिक (नगर–रक्षक) होता था, जो लाल फूलों की एक माला पहने रहता था। नगर की सुरक्षा, अपराधियों को पकडना तथा उन्हें दण्ड देने की व्यवस्था करना इसके कार्य थे, रात्रि के समय सुरक्षा के दृ ष्टिकोण से नगर द्वार, द्वारपाल की तीन सूचना उपरान्त बन्द कर दिये जाते थे तथा नगर कोतवाल की आज्ञा से नियुक्त टोलियाँ नगर की गलियों में घूमती रहती थी। मौयकालीन नगर को स्थानीय कहते थे तथा इसका शासक नागरिक कहलाता था। नागरिक (नागरक) को पुर मुख्य भी कहते थे। प्रान्त की भाँति नगर को भी चार भागों अथवा मंडलो मे विभाजित कर प्रत्येक भाग को स्थानिक नामक अधिकारी के अर्न्तगत रखा गया था जिसके अधीन गोप नामक कई पदाधिकारी होते थे तथा प्रत्येक गोप (आधुनकि सभासद) पर दस, बीस या चालीस घरों की देखभाल का उत्तरदायित्व था। कौटिल्य ने नगर प्रशासन की प्रणाली नगर जीवन की विशिष्ट आवश्यकताओं तथा समस्याओं को ध्यान में रखकर तैयार की थी। कौटिल्य ने नगर में घूमने–फिरने जैसे सामान्य कार्यकलापों को नियमों में बाँधा नगर के मुख्य कारागार को बंधनागार कहते थे तथा नगर के कारागार का प्रधान अधिकारी बंधनागाराध्यक्ष कहलाता था। कौटिल्य ने लिखा है कि जिस प्रकार समाहर्ता जनपद का शासनकर्ता है उसी प्रकार नगर का अधिकारी नागरिक (नागरक) नगर के शासन अथवा व्यवस्था की चिन्ता करें। महामात्र, नगर व्यवहारिक का भी कार्य करते थे। मौर्य–नगर प्रशासन चार भागों में विभाजित था तथा प्रत्येक भाग स्थानिक के अधीन था, ये स्थानिक अपने उच्चस्थ अधिकारी नागरक (नगर प्रमुख) तथा अधीनस्थ अधिकारी गोप के मध्य सम्पर्क सूत्र का कार्य करते थे।

मेगास्थनीज ने तीन प्रकार के उच्च अधिकारियों का वर्णन किया है– जिलाध्यक्ष, नगराध्यक्ष और सेनाध्यक्ष। नगर का प्रमुख अधिकारी नागरक था तथा नगर की देखरेख के लिए याम–रक्षक नियुक्त थे जो यदि किसी गलत व्यक्ति को छोड़ देते थे तो उन्हें दण्ड दिया जाता था। नागरक को सम्भवतः बन्धनागार (कारागार अध्यक्ष) का भी प्रबन्ध करना पड़ता था। अतः बन्दियों की मुक्ति का आदेश, उनके कार्यों आदि का निरीक्षण व जाँच का दायित्व बन्ध् नागाराध्यक्ष का ही था। नागरक सम्भवतः समाहर्ता व प्रदेष्टा के अधीन होता था। मेगस्थनीज के अनुसार पाटलिपुत्र का प्रशासन 30 सदस्यीय आयोग के अधीन था जिसमें पाँच–पाँच सदस्यों की छः समिति थी–प्रथम समिति उद्योगों, मजदूरों व शिल्पीयों के हितों की देखरेख करती थी, द्वितीय समिति मदिरालायों पर नियन्त्रण व विदेशी यात्रियों की देखभाल करती थी। सतीय समिति जनगणना से सम्बन्धित थी, चतुर्थ समिति वाणिज्य व्यापार, बाजार नियन्त्रण, बॉट–नाप, अनुमति पत्र (लाइसेंस) इत्यादि से सम्बद्ध थी पाँचवी समिति मिलावट रोकने तथा निर्मित वस्तुओं की देखभाल का कार्य करती थी तथा अन्तिम छठी समिति पर बिक्री कर एवं क्रय इत्यादि के अतिरिक्त लोकोपकारी कार्यों का भी उत्तरदायित्व था।

मेगास्थनीज ने नगर के पदाधिकारियों को एस्टिनोमोई कहा है तथा समितियों की कार्यशैली से स्पष्ट हैं कि मौर्या युग में नगरों को स्वायत्य शासन प्राप्त था। मेगास्थनीज द्वारा वर्णित प्रथम समिति की पुष्टि अर्थशास्त्र में उल्लेखित सूत्राध्यक्ष, सौवर्णिक, कप्याध्यक्ष इत्यादि से हो जाती है, द्वितीय समिति के अस्तित्व की पुष्टि सुराध्यक्ष) पद से होती है तृतीय, समिति द्वारा वर्णित जनगणना का कार्य समहर्ता और नागरिक की ओर से गोप नामक राजपुरूष करते थे, जो मनुष्यों व उनके वर्णों तथा कार्यों के अतिरिक्त पुशओं और जन्तुओ की भी गणना करते थे। मेगास्थनीज द्वारा वर्णित चौथी व पाँचवी समिति के सन्दर्भ में अर्थशास्त्र में पण्याध्यक्ष या वाणिज्याध्यक्ष

जो माल की पूर्ति, कीमतों व क्रय–विक्रय पर नियन्त्रण रखते थे तथा पौतवाध्यक्ष जो तौल और माप का अधीक्षक था, का उल्लेख है। पाँचवी समिति का मिलावट रोकने का दायित्व तथा छठी समिति का कर वसूलने का अधिकार कौटिल्य ने शुल्काध्यक्ष नामक पदाधिकारी को दिया। मौर्यकालीन नगरों की तुलना एफ० डब्लू० टामस महोदय ने स्वयं अपने इंग्लैण्ड में मध्यकालीन इंग्लैण्ड के रायल बरोज तथा अन्य स्वतन्त्र नगरों से की है।

सम्राट अशोक ने नगर व्यवहारिक (नगल–वियोहलक) महामात्र व नागरक को निर्देश दिया था कि वे यत्न करें कि नगरजन को अकारण कष्ट न पहुचे। नगर–व्यवहारिक नगर का न्यायधीश होता था जिसे अर्थशास्त्र में पौर–व्यवहारिक कहा गया है। नगर वहारिक को महामात्र कहने से स्पष्ट है कि उसका पद मन्त्री के समकक्ष था। नगर व्यावहारिक न्याय का कार्य नागरक के अधीन होकर करते थे तथा विशेष परिस्थितियों मे नागरक उनके कार्यों में हस्तक्षेप कर सकता था। गुप्तकालीन नगर को प्रमुखों का श्पुरपालश (नगर रक्षक) कहते थे जो कुमारामात्य देवी का अधिकारी था। वैशाली से प्राप्त मुहरों से स्पष्ट है कि नगर प्रशासन में यावसायिक संगठनों की अच्छी साझेदारी रहती थी। पुरपाल उपरिक नगरों के प्रमुखों का अध्यक्ष तथा अवस्थिक धर्मशालाओं का पर्यवेक्षक होता था। नगरप्रमुखों को उनके नगरों के नाम से भी सम्बोधित किया जाता था। उदाहराणार्थ–दशपुर के प्रमुख को दशपुर पाल कहा जाता था।

गुप्तकालीन विषय को वीथियों (ग्राम या तहसील समूह) में बाँटा गया था और वीथियों को ग्रामों में ग्राम समूह की इन छोटी इकाइयों को पेठ कहते थे। प्रशासन की सबसे छोटी ईकाई ग्राम को ग्राम सभा द्वारा चलाया जाता था जिसे मध्यभारत में पच्चमण्डली तथा बिहार में ग्राम–जनपद कहा जाता था। ग्राम सभा के पदाधिकारियों में महत्तर (ग्राम वृद्ध), ग्रामिक (ग्राम प्रमुख या मुखिया), अष्टकुलाधिकारी (सम्भवतः यह स्थानीय क्षेत्र के आठ कुलों या परिवारों का अधिकारी था) व कुटुम्बिन् (परिवार) का जाता था। कामसूत्र के अनुसार ग्रामाधिपति आयुक्तक, कृषक स्त्रियों को अपना धान्यागार भरने, विभिन्न वस्तुएं अपने कार्यालय में ले जाने अपने आवास की सफाई और सजावट करने अपने खेतों में कार्य करने और अपने कपडे के लिए कपास, ऊन, पटसन से सूत कातने को विवश कर सकता था। ग्रामिक प्रायः ग्रामवृद्धो अथवा महत्तरों की पंचमण्डली (पंचायत) की सहायता से ग्राम प्रशासन का संचालन करता था। महत्तर ग्राम सभा के सदस्य होते थे जो ग्राम के सम्भ्रान्त व्यक्ति होते थे। ग्राम सभा (ग्राम जनपद) की अपनी मुहरें होती थी। स्कन्दगुप्त के विहार लेख के अनुसार अनुदान में प्रदान की गई भूमि की देख–रेख के लिए अग्रहारिक नामक राजकर्मचारी नियुक्त किये जाते थे।

प्राचीन भारतीय ग्रामीण व्यवस्था और नगरों के मध्य अत्यंत घनिष्ठ, परस्पर निर्भर और संतुलित संबंध थे। कृषि, पशुपालन और कच्चे संसाधनों के उत्पादन का केंद्र ग्राम थे, जबकि व्यापार, शिल्प, प्रशासन और सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रमुख स्थल नगर थे। इन दोनों के बीच वस्तुओं, सेवाओं इत्यादि का निरंतर आदान–प्रदान होता था, जिससे संपूर्ण अर्थव्यवस्था और समाज का संतुलित विकास हुआ। कालान्तर में विभिन्न राजनीतिक और आर्थिक परिवर्तनों विशेषकर सामंतवाद के उदय ने इस संबंध को प्रभावित किया, फिर भी ग्राम और नगर एक–दूसरे के पूरक बने रहे। प्राचीन भारतीय समाज की संरचना ग्राम और नगर के समन्वित एवं सहयोगात्मक संबंधों पर आधारित थी, जिसने उसकी स्थिरता और समृद्धि को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

सन्दर्भिका :–

1. सी०ई०एम० जोड, इण्डियन सिविलाइजेशन।
2. वी०आर० रामचन्द्र दीक्षितार, द मौर्यन पालिटी।
3. एस०सी० मिश्रा, इबोलूशन ऑफ कौटिल्याज् अर्थशास्त्र–एन इनसक्रिप्शनल एप्रोच।
4. एलियन, एन्शेण्ट इण्डिया एज डिस्कायिबड इन क्लासिकल लिटरेचर, पृष्ठ–48
5. संपादक परमेश्वरी लाल गुप्त, प्राचीन भारत के प्रमुख अभिलेख (खण्ड 1) मौर्यकाल से गुप्तकाल तक।
6. आर०एस० शर्मा, प्राचीन भारत।
7. श्रीनेत्र पाण्डेय, भारतवर्ष का सम्पूर्ण इतिहास।
8. डा० कैलाश चन्द्र जैन, प्राचीन भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और भौगोलिक अध्ययन
9. डी०एन० झा एवं के०एम० श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास।
10. राधाकुमुद मुखर्जी, अशोक।

11. कौटिल्य , अर्थशास्त्र।16. बी.पी. वर्मा, ह्यूमन पर्सनालिटी एण्ड पॉलिटिक्स, के.एस. मूर्ति (संपा.)।
12. डी. आर. भण्डारकर, सम ऑस्पेक्टस ऑफ एन्शियन्ट इंडियन हिन्दू पॉलिटी।
13. हरिश्चन्द्र शर्मा, प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचार एवं संस्थायें, जयपुर पब्लिसर्स।
14. बी०एन० पुरी, इण्डिया–अण्डर द कुषाण (1965)।
15. श्री राम गोयल, गुप्त साम्राज्य का इतिहास।
16. प्रो० भगवती प्रसाद पांथरी, मौर्य साम्राज्य का सांस्कृतिक इतिहास।
17. रोमिला थापर, अशोक एण्ड द डेक्लाइन ऑफ मोर्याज।
18. परमेश्वरी लाल गुप्त (संपा०), प्राचीन भारत के प्रमुख अभिलेख, खण्ड–1